Volume-4, Issue-12, Dec-2015 • ISSN No 2277 - 8160

Research Paper Engineering

कबीर के काव्य में जन–चेतना और स्त्री दृश्टिकोण

षुभराम एक्सटेंषन लेक्चरर (हिन्दी) राजकीय महिला महाविद्यालय महेन्द्रगढ़

KEYWORDS :

कबीरदास जी भक्तिकालीन हिन्दी साहित्य की निर्गुण संत काव्यधारा के सर्वश्रेश्ठ कवि थे। कबीर एक महान कवि, महात्माँ तथा सच्चे समाज सुधारक थे। इन्होने अपने काव्य में जनभाशा को अपनाया है जिसमें अवधी, ब्रज, खड़ी बोली पूर्वी हिन्दी, अरबी, फारसी, राजस्थानी तथा पंजाबी भाशा के षब्दों का भी मिश्रण किया गया हैं। कबीर की भाशा को सधुक्कड़ी तथा पंचमेल खिचड़ी भी कहा जाता हैं। इन्होने अपनी वाणी को साखी, दौहा, चौपाई ष्षैली में प्रस्तुत किया हैं। कविता करना उनका मकसद नहीं था फिर भी वे एक उच्च कोटि के कवि थे इस बात को सभी लोग स्वीकार करते हैं। उन्होने अपने जीवन में जो अनुभव किया उसे बिना किसी लाग–लपेट के सहज ष्षब्दावली में अभिव्यक्त कर दिया। कबीर पंथियों में कबीर के जन्म के संदर्भ में यह छंद प्रसिद्ध है –

चौदह सौ पचपन साल गये, चंद्रवार एक ठाठ गए।
जेठ सुदी बरसायत को, पूरनमासी तिथि प्रगट भए।।
घन गरजे दामिनि दमके, बूँदे बरसे झर लाग गए।
लहर तालाब में कमल खिले, तहँ कबीर भानु प्रगट भए।।

कबीरदास जी का जन्म संवत् 1455 में काषी में हुआ और मृत्यु संवत् 1575 में बनारस के समीप मगहर नामक स्थान पर हुई। कबीर के बारे में यह लोकमत है कि ये गृहस्थ थे। उनकी पत्नी का नाम लोई था तथा एक पुत्र कमाल और एक पुत्री कमाली थी। अधिकांष विद्वान कबीर को रामानन्द का षिश्य मानते है। कबीर अंध–विष्वास का खंडन करने वाले और मानव धर्म के सच्चे पारखी तथा प्रबल क्रांतिकारी थे। कबीर के समय राजनीतिक, सामाजिक और धार्मिक परिस्थितियों में स्थिरता का अभाव था। ऐसे समय कबीर विष्व–ध र्म की स्थापना करना चाहते थे। वे जन्मजात विद्रोही थे और उनके अन्दर अदम्य साहस एवं अखण्ड आत्मविष्वास था। वे प्रखर प्रतिभा तथा विलक्षण अथक सषक्त व्यक्तित्व के धनी थे। उन्हे यह विष्वास था कि उन्होने वास्तविक सत्य का ज्ञान प्राप्त कर लिया है। इसलिए वे उस सत्य के विपरीत आचरण करने वाले को फटकार कर सच्चाई के मार्ग पर लाना चाहते थे। वे सिकंदर लोदी के सामने झुके नहीं, हिन्दू और मुस्लमानों के प्रबल रोश ने उन्हे तनिक भी विचलित नहीं किया वे योगियों के प्रभाव से आहत नहीं हुए और न ही सूफी उन्हे अपने सम्प्रदाय में षामिल कर सके। उन्होने कदाचार का डटकर विरोध किया वे जीवन–पर्यन्त अपनी अटपटी वाणी के द्वारा उतरी भारत का नेतृत्व करते रहे। सुकरात के समान वे सामाजिक व्यवस्था और धार्मिक व्यवस्था पर तीव्र आघात करते थे सुकरात के समान ष्षासक वर्ग ने कबीर को भी विश का प्याला दिया परन्तु वे पीकर पचा गए। कबीर का व्यक्तित्व अद्भूत है। निरक्षर होने के बावजूद कबीर बड़े–बड़े दार्षनिक विद्वानों के कथन को कागज की लेखी कहकर ठुकरा देते थे। तार्किकता के क्षेत्र में अत्यंत ष्षुश्क, हृदयहीन, तीक्ष्ण प्रतीत होने वाले कबीर भक्ति की भाव धारा में बहते समय सबसे आगे दिखाई देते है। निरक्षरता को कबीर ने स्वयं स्वीकार किया है–

efl dkxn N;k ufgj dye xg;k ugh gkFkA

यह बिना किसी विवाद के सत्य है कि उन्होने स्वतः किसी ग्रंथ को लिपिबद्ध नहीं किया। कबीर के नाम की लगभग 63 रचनाऐं बतायी जाती है फिर भी साहित्य के महत्व की दृश्टि से प्रसिद्ध है–आदिग्रंथ में संकलित पद, बीजक, रमैनी, साखी तथा सबद। बीजक कबीर का सर्वाधिक महत्वपूर्ण ग्रंथ है। और इसके बारे में कहा जाता है कि कबीर ने स्वयं अपने दो षिश्यों जगजीवनदास तथा भगवान दास को यह ग्रंथ प्रदान किया। रमैनी बीजक का महत्वपूर्ण अंष है। जिसकी रचना दोहो और चौपाईयो के क्रम में हुई है। इनके द्वारा गाए पदो तथा भजनों के संग्रह को सबद कहा गया है। कबीर मूलतः भक्त है, समाज सुधारक है, साधक है, मानवतावादी संत है, उसके बाद कवि है। कबीर की प्रमुख विषेशता यह है कि इनके जैसा अप्रिय सत्य कहने का साहस किसी दूसरे कवि में खोजने पर भी नहीं मिलता। समस्त संत कवियों में कबीर सबसे अधिक प्रतिभाषाली है। उनमें काव्यानुभूति इतनी सबल और उत्कृश्ट है कि काव्यश्षास्त्र से सर्वथा अनजान रहते हुए भी वे महाकवि कहलाने के अधिकारी है। कवि को जीवन के कठोर सत्य का पूर्ण ज्ञान था क्योंकि उनके काव्य का आधार सहानुभूति और कठोर यर्थाथ है। उन्होंने इस संदर्भ में स्पश्ट कहा हैं –

e dgrk gk vkf[ku dh n[khA
r dgrk dkxn dh y[khAA

कबीर ने निर्गुण निराकार परमात्मा के लिए अनेक नामों का प्रयोग किया है। एक और तो वे उसे अल्ला, करीम, खुदा, रहीम कहते है तथा दूसरी और उसे केषव, माधव, जगदीष, हरि, गोविन्द, राम आदि नामों से सम्बोधित करते है। कबीर के लिए सभी नामों का महत्व एक ही है। अतः वे नाम के विवाद मे नहीं फंसना चाहते। वे इतना अवष्य कहते है कि मेरे राम दषरथ पुत्र राम नहीं है –
दषरथ सुत तिहुँ लोक बखाना, राम नाम का मरम है आना।

कबीर निर्गुण निराकार ईष्वर मे विष्वास रखते थे। कबीर के अनुसार ब्रह्म अनन्त, अगम तथा अगोचर है। निर्गुण ईष्वर सृश्टि के कण–कण मे समाया हुआ है। निर्गुण ब्रह्म का निवास न देवालयो में होता है न पूजा पाठ में न बाह्याडम्बरो में बल्कि प्रत्येक मनुश्य के हृदय में वह निवास करता है परन्तु माया के चक्कर में फंसकर हम उस ईष्वर को बाहर खोजते फिरते हैः–

कस्तूरी कुँडल बसै, मृग ढूंढे वन माहिं।
ऐसे घट में पीव है, दुनियाँ जाने नांहि।।

कबीरदास जी एक अन्य दोहे मे स्पश्ट करते है जिस प्रकार तिलो मे तेल है और चकमक पत्थर के अन्दर आग है उसी प्रकार मनुश्य के हृदय मे ईष्वर का वास है।

ज्यों तिल माहीं तेल, ज्यों चकमक मे आगि।
तेरा साई तुज्झ में, जागि सके तो जागि।।

कबरीदास जी ने अपनी वाणी और सिद्धान्तों में गुरू को परमात्मा से अधिक महत्व प्रदान किया। क्योंकि गुरू ही षिश्य को परमात्मा से मिलने का मार्ग दिखाता है। कबीर के समकालीन कवियों सूरदास, तुलसीदास आदि ने भी इस मान्यता को स्वीकारा है। कबीर के मतानुसार गुरू के बिना सभी साधनाएँ अधूरी है। कबीर के समक्ष गुरू और गोविन्द दोनों खड़े है। अतः कवि निर्णय करता है कि पहले गुरू के ही चरण – स्पर्ष करने चाहिए। क्योंकि ईष्वर को प्राप्त करने का रास्ता वही दिखाता है –

गुरू गोविन्द दोऊ खडे, काकै लांगू पाय।
बलिहारी गुरू आपने, जिन गोविन्द दियो मिलाय।।
अथवा
सतगुरू की महिमा अनंत, अनंत किया उपगार।
लोचन अनंत उघारिया, अनंत दिखावन हार।।

कबीर का युग सामाजिक अव्यवस्था का युग कहा जा सकता है। उस समय समाज में जाति – पाति, धर्म, धन, ऊँच – नीच, वर्ण – व्यवस्था आदि का बोलबाला था। कबीर मनुश्य को ईष्वर की संतान मानते थे। इसलिए वे ऊँच – नीच, अभिजात्य – निम्न के भेद को बनावटी तथा व्यर्थ मानते है। कबीर स्वयं निम्न जाति से थे। अतः यह मनोवैज्ञानिक कारण भी कबीर के लिए वर्ण – व्यवस्था का विरोध करने में सहायक सिद्ध हुआ। वे

जाति व्यवस्था को व्यर्थ सिद्ध करते हुए कहा करते थे –
जाति – पाति पूछे नहिं कोय।
हरि को भजै सो हरि का होय।।

कबीरदास जी ने मानव को ईष्वर की संतान माना है। उनकी नजर मे सभी मनुश्य समान है। कोई छोटा – बड़ा नहीं है। एक स्थान पर वे कहते है –

एक बूँद एकै मल मूतर, एक चाँम एक गूदा।
एक जोति थै सब उतपनाँ, कौन बाम्हन कौन सूदा।।

कबीरदास जी भक्तिकालीन हिन्दी साहित्य के महान रहस्यवादी कवि थे। कबीर ने अपने रहस्यवाद मे उस स्थिति का वर्णन किया है जब विरहिणी आत्मा असीम परमात्मा से एकाकार करना चाहती है। उन्होंने आत्मा रूपी प्रेमिका को परमात्मा रूपी प्रिय के लिए विरह से बेचैन दिखाया है। कबीर के अनुसार साधना के क्षेत्र मे जो ईष्वर है, साहित्य के क्षेत्र मे वहीं रहस्यवाद है। एक स्थान पर विरहिणी आत्मा कहती है –
आय सकौं नहिं तुज्झ पै, सकौ न तुज्झ बुलाय।
जियरा यों ही लेहुगे, विरह तपाय तपाय।।

कबीर के रहस्यवाद पर ष्षंकर के अद्वैतवाद का प्रभाव स्पश्ट नजर आता है। कई स्थलों पर वे प्रतीकात्मक ष्षब्दावली का प्रयोग करने लगते है। उनका रहस्यवाद ष्षुद्ध भावात्मक स्तर को छूता है –

जल में कुम्भ कुम्भ में जल, भीतर बाहर पानी।
फूटा कुम्भ जल जलहि समाना, यह तत्व कहै ग्यानी।।

कबीर ने अपनी वाणी मे नाम – स्मरण पर विषेश बल दिया है। उनका मत था कि हम नाम – स्मरण के बिना ईष्वर को प्राप्त नहीं कर सकते है। जब तक मनुश्य के षरीर रूपी दीपक मे प्राण रूपी तेल है तब तक मनुश्य को निडर होकर राम के नाम का जाप करना चाहिए जब हमारे षरीर से आयु रूपी तेल घट जाएगा। तब यह बत्ती भी बुझ जाएगी।

कबीर निर्भय राम जपु, जब लगि दीवा बाति।
तेल घटै बाति बुझै, तब सोवोगे दिन – राति।।

कबीरदास जी ने नारी को माया के रूप में स्वीकार किया है। वे नारी को जहर की पुडिया, कॉटो की झाड़ी और नागिन कहकर पुकारते है। उनका मत है कि नारी के कारण ही मनुष्य भक्ति, मुक्ति तथा ज्ञान को नहीं पा सकता है। नारी मनुश्य के सर्वनाष का कारण बनती है कबीर ने नारी के सहवास को विश – तुल्य माना है उनका विष्वास है कि नारी की छाया पडने से साँप भी अन्धा हो जाता है।

नारी की झाई परत, अंधा होत भुजंग।
कबिरा तिनकी कौन गति, जो नित नारी – संग।।

यह दौहा कबीर ने उन नारियों के लिए कहा है जो दूसरे पुरुशों पर डोरे डालती है। कबीर द्वारा नारी की निन्दा करने पर कुछ आलोचकों ने उनका विरोध भी किया परन्तु कबीर नारी की निन्दा करते है तो वे पतिव्रता नारी की प्रषंसा भी करते है। वे पतिव्रता नारी के ऊपर करोडों रूपों को न्यौछावर करने की बात कहते है –

पतिव्रता मैली भली, काली कुचित कुरुप।
पतिव्रता के रूप पर, वारौ कोटिक रूप।।

कबीर का व्यक्तित्व क्रान्तिकारी चेतना से युक्त था उन्होंने अपने समय मे निर्भीकतापूर्वक समाज सुधार किए है वो अद्वितीय है। आज के युग में तथा कथित समाज सुधारक भी ऐसा साहस नहीं दिखा सकते जो कबीर ने धार्मिक उन्माद से ग्रस्त तत्कालीन युग में दिखाया था। एक सच्चे युग पुरुश की भांति उन्होंने अन्धविष्वासों, रूढियों, अनीति, अत्या. चारों एवं दोशों पर प्रबल प्रहार करते हुए समाज को सही दिषा – निर्देष देने का प्रयास किया। कबीर उदार संतोशी, निर्भीक, अंहिसा और प्रेम के समर्थक तथा बाह्य आडम्बरों के घोर विरोधी थे। कबीर मस्तमौला के साथ फक्कड़ आदत से अक्खड़, भक्त के समान निरीह वेशधारी के आगे प्रचण्ड, दिल के साफ, दिमाग और कर्म से वंदनीय थे। कबीर ने जहाँ पंडितो, पीरों फकीरों को उनके पाखण्डों के लिए फटकार लगाई वहीं उन्होंने एक सामान्य धर्म की स्थापना भी की जिसके दरवाजे सभी के लिए खुले थे। इस अर्थ में भक्ति काव्य के अन्दर वे एक विद्रोही कवि थे। इसमें सन्देह नहीं है। कबीर की भाशा विविध भाशाओं से गृहीत ब्रजभाशा है। इसका कारण है कि वे एक स्थान से दूसरे स्थान की यात्रा से प्राप्त विभिन्न भाशाओं का व्यवहार स्वाभाविक भी था और आवष्यक भी। उनकी कविता में षास्त्रीयता की खोज करना व्यर्थ है। भाशा में तो वह और भी कठिन है। सच कहा जाए तो आज तक हिन्दी में ऐसा जबरदस्त व्यंग्य और विद्रोही कवि पैदा ही नहीं हुआ है। कबीर की भाशा साफ चोट करने वाली है वह बिना कुछ कहे भी सब कुछ कह देने वाली षैली तथा अत्यन्त सादी परन्तु अत्यंत तेज व असाधारण है। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने कबीर की भाशा पर कहा है – भाशा पर कबीर का जबरदस्त अधिकार था वे वाणी के डिक्टेटर थे। जिस बात को उन्होने जिस रूप में प्रकट करना चाहा है, उसे उसी रूप में भाशा से कहलवा लिया है। बन गया तो सीधे–2 नही तो दरेरा देकर भाशा कबीर के सामने लाचार सी नजर आती हैं। वे भारतीय समाज और हिन्दी साहित्य की अप्रतिम अनूठी निधि हैं।

REFERENCES

1. मध्यकालीन काव्य–कुंज, डॉ0 रामसजन पाण्डेय। 2. अरिहन्त पब्लिकेषंस 3. हिन्दी साहित्य का इतिहास, आ0 रामचन्द्र षुक्ल 4. हिन्दी साहित्य का उद्भव और विकास ऑ0 हजारी प्रसाद द्विवेदी 5. कबीर ग्रंथावली बाबू ष्याम सुंदरदास 6. कबीर, आ0 हजारी प्रसाद द्विवेदी 7. कबीर रचनावली, अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरी औध'